ममता कालिया

(जन्म सन् 1940)

ममता कालिया का जन्म मथुरा उत्तर प्रदेश में हुआ। उनकी शिक्षा के कई पड़ाव रहे जैसे नागपुर, पुणे, इंदौर, मुंबई आदि। दिल्ली विश्वविद्यालय से उन्होंने अंग्रेज़ी विषय से एम.ए. किया। एम.ए. करने के बाद सन् 1963-1965 तक दौलत राम कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय में अंग्रेज़ी की प्राध्यापिका रहीं। 1966 से 1970 तक एस.एन.डी.टी. महिला विश्वविद्यालय, मुंबई में अध्यापन कार्य, फिर 1973 से 2001 तक महिला सेवा सदन डिग्री कालेज, इलाहाबाद में प्रधानाचार्य रहीं। 2003 से 2006 तक भारतीय भाषा परिषद् कलकत्ता की निदेशक रहीं। वर्तमान में नयी दिल्ली में रहकर स्वतंत्र लेखन कर रही हैं।

*उनकी प्रकाशित कृतियाँ हैं–**बेघर, नरक दर नरक, एक पत्नी के नोट्स, प्रेम कहानी, लड़कियाँ, दौड़** आदि (उपन्यास) हैं तथा 12 कहानी-संग्रह प्रकाशित हैं जो **संपूर्ण कहानियाँ** नाम से दो खंडों में प्रकाशित हैं। हाल ही में उनके दो कहानी-संग्रह और प्रकाशित हुए हैं, जैसे **पच्चीस साल की लड़की, थियेटर रोड के कौवे।***

*कथा-साहित्य में उल्लेखनीय योगदान के लिए उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान से **साहित्य भूषण** 2004 में तथा वहीं से **कहानी सम्मान** 1989 में प्राप्त हुआ। उनके समग्र साहित्य पर अभिनव भारती कलकत्ता ने **रचना पुरस्कार** भी दिया। इसके अतिरिक्त उन्हें सरस्वती प्रेस तथा साप्ताहिक हिंदुस्तान का **श्रेष्ठ कहानी पुरस्कार** भी प्राप्त है।*

ममता कालिया शब्दों की पारखी हैं। उनका भाषाज्ञान अत्यंत उच्चकोटि का है। साधारण शब्दों में भी अपने प्रयोग से जादुई प्रभाव उत्पन्न कर देती हैं। विषय के अनुरूप सहज भावाभिव्यक्ति उनकी खासियत है। व्यंग्य की सटीकता एवं सजीवता से भाषा में एक अनोखा प्रभाव उत्पन्न हो जाता है। अभिव्यक्ति की सरलता एवं सुबोधता उसे विशेष रूप से मर्मस्पर्शी बना देती है।

*पाठ्यपुस्तक में संकलित **दूसरा देवदास** कहानी हर की पौड़ी, हरिद्वार के परिवेश को केंद्र में रखकर युवामन की संवेदना, भावना और विचारजगत की उथल-पुथल को आकर्षक भाषा-शैली में प्रस्तुत करती है। यह कहानी युवा हृदय में पहली आकस्मिक मुलाकात की हलचल, कल्पना*

*और रूमानियत का उदाहरण है। **दूसरा देवदास** कहानी में लेखिका ने इस तरह घटनाओं का संयोजन किया है कि अनजाने में प्रेम का प्रथम अंकुरण संभव और पारो के हृदय में बड़ी अजीब परिस्थितियों में उत्पन्न होता है। यह प्रथम आकर्षण और परिस्थितियों के गुंफन ही उनके प्रेम को आधार और मजबूती प्रदान करता है। जिससे यह सिद्ध होता है कि प्रेम के लिए किसी निश्चित व्यक्ति, समय और स्थिति का होना आवश्यक नहीं है। वह कभी भी, कहीं भी, किसी भी समय और स्थिति में उपज सकता है, हो सकता है। कहानी के माध्यम से लेखिका ने प्रेम को बंबईया फ़िल्मों की परिपाटी से अलग हटाकर उसे पवित्र और स्थायी स्वरूप प्रदान किया है। कथ्य, विषयवस्तु, भाषा और शिल्प की दृष्टि से कहानी बेजोड़ है।*

दूसरा देवदास

हर की पौड़ी पर साँझ कुछ अलग रंग में उतरती है। दीया-बाती का समय या कह लो आरती की बेला। पाँच बजे जो फूलों के दोने एक-एक रुपए के बिक रहे थे, इस वक्त दो-दो के हो गए हैं। भक्तों को इससे कोई शिकायत नहीं। इतनी बड़ी-बड़ी मनोकामना लेकर आए हुए हैं। एक-दो रुपए का मुँह थोड़े ही देखना है। गंगा सभा के स्वयंसेवक खाकी वरदी में मुस्तैदी से घूम रहे हैं। वे सबको सीढ़ियों पर बैठने की प्रार्थना कर रहे हैं। शांत होकर बैठिए, आरती शुरू होने वाली है। कुछ भक्तों ने स्पेशल आरती बोल रखी है। स्पेशल आरती यानी एक सौ एक या एक सौ इक्यावन रुपए वाली। गंगातट पर हर छोटे-बड़े मंदिर पर लिखा है। 'गंगा जी का प्राचीन मंदिर।' पंडितगण आरती के इंतज़ाम में व्यस्त हैं। पीतल की नीलांजलि में सहस्र बत्तियाँ घी में भिगोकर रखी हुई हैं। सबने देशी घी के डब्बे अपनी ईमानदारी के प्रतीकस्वरूप सजा रखे हैं। गंगा की मूर्ति के साथ-साथ चामुंडा, बालकृष्ण, राधाकृष्ण, हनुमान, सीताराम की मूर्तियों की श्रृंगारपूर्ण स्थापना है। जो भी आपका आराध्य हो, चुन लें।

आरती से पहले स्नान! हर-हर बहता गंगाजल, निर्मल, नीला, निष्पाप। औरतें डुबकी लगा रही हैं। बस उन्होंने तट पर लगे कुंडों से बँधी ज़ंजीरें पकड़ रखी हैं। पास ही कोई न कोई पंडा जजमानों के कपड़ों-लत्तों की सुरक्षा कर रहा है। हर एक के पास चंदन और सिंदूर की कटोरी है। मर्दों के माथे पर चंदन तिलक और औरतों के माथे पर सिंदूर का टीका लगा देते हैं पंडे। कहीं कोई दादी-बाबा पहला पोता होने की खुशी में आरती करवा रहे हैं, कहीं कोई नयी बहू आने की खुशी में। अभी पूरा अंधेरा नहीं घिरा है। गोधूलि बेला है।

यकायक सहस्र दीप जल उठते हैं पंडित अपने आसन से उठ खड़े होते हैं। हाथ में अँगोछा लपेट के पंचमंजिली नीलांजलि पकड़ते हैं और शुरू हो जाती है आरती। पहले पुजारियों के भर्राए गले से समवेत स्वर उठता है—जय गंगे माता, जो कोई तुझको ध्याता, सारे सुख पाता, जय गंगे माता। घंटे घड़ियाल बजते हैं। मनौतियों के दिये लिए हुए फूलों की छोटी-छोटी किश्तियाँ गंगा की लहरों पर इठलाती हुई आगे बढ़ती हैं। गोताखोर दोने पकड़, उनमें रखा चढ़ावे का पैसा उठाकर मुँह में दबा लेते हैं। एक औरत ने इक्कीस दोने तैराएँ हैं। गंगापुत्र जैसे ही एक दोने से पैसा उठाता है, औरत अगला दोना सरका देती है। गंगापुत्र उसपर लपकता है कि पहले दोने की दीपक से उसके लँगोट में आग की लपट लग जाती है। पास खड़े लोग हँसने लगते हैं। पर गंगापुत्र हतप्रभ नहीं होता। वह झट गंगाजी

में बैठ जाता है। गंगा मैया ही उसकी जीविका और जीवन है। इसके रहते वह बीस चक्कर मुँह भर-भर रेज़गारी बटोरता है। उसकी बीवी और बहन कुशाघाट पर रेज़गारी बेचकर नोट कमाती हैं। एक रुपए के पच्चासी पैसे। कभी-कभी अस्सी भी देती हैं। जैसा दिन हो।

पुजारियों का स्वर थकने लगता है तो लता मंगेशकर की सुरीली आवाज़ लाउडस्पीकरों के साथ सहयोग करने लगती है और आरती में यकायक एक स्निग्ध सौंदर्य की रचना हो जाती है। 'ओम जय जगदीश हरे' से हर की पौड़ी गुंजायमान हो जाती है।

औरतें ज़्यादातर नहाकर वस्त्र नहीं बदलतीं। गीले कपड़ों में ही खड़ी-खड़ी आरती में शामिल हो जाती हैं। पीतल की पंचमंजिली नीलांजलि गरम हो उठी है। पुजारी नीलांजलि को गंगाजल से स्पर्श कर, हाथ में लिपटे अँगोछे को नामालूम ढंग से गीला कर लेते हैं। दूसरे यह दृश्य देखने पर मालूम होता है वे अपना संबोधन गंगाजी के गर्भ तक पहुँचा रहे हैं। पानी पर सहस्र बाती वाले दीपकों की प्रतिच्छवियाँ झिलमिला रही हैं। पूरे वातावरण में अगरु-चंदन की दिव्य सुगंध है। आरती के बाद बारी है संकल्प और मंत्रोच्चार की। भक्त आरती लेते हैं, चढ़ावा चढ़ाते हैं। स्पेशल भक्तों से पुजारी ब्राह्मण-भोज, दान, मिष्ठान की धनराशि कबुलवाते हैं। आरती के क्षण इतने भव्य और दिव्य रहे हैं कि भक्त हुज्जत नहीं करते। खुशी-खुशी दक्षिणा देते हैं। पंडित जी प्रसन्न होकर भगवान के गले से माला उतार-उतारकर यजमान के गले में डालते हैं। फिर जी खोलकर देते हैं प्रसाद, इतना कि अपना हिस्सा खाकर भी ढेर सा बच रहता है, बाँटने के लिए-मुरमरे, इलायचीदाना, केले और पुष्प।

खर्च हुआ पर भक्तों के चेहरे पर कोई मलाल नहीं। कई खर्च सुखदायी होते हैं।

कुछ पंडे अभी भी अपने तख्त पर जमे हैं। देर से आनेवाले भक्तों का स्नान ध्यान अभी जारी है। आरती के दोने फिर एक रुपए में बिकने लगे हैं। गंगाजल आकाश के साथ रंग बदल रहा है।

संभव काफ़ी देर से नहा रहा था। जब घाट पर आया तो मंगल पंडा बोले, 'का हो जजमान, बड़ी देर लगाय दी। हम तो डर गए थे।'

संभव हँसा। उसके एक सार खूबसूरत दाँत साँवले चेहरे पर फब उठे। उसने लापरवाही से कपड़े पहने और जांघिया निचोड़कर थैले में डाला। जब वह कुरते से पोंछकर चश्मा लगा रहा था, पंडे ने उसके माथे पर चंदन तिलक लगाने को हाथ बढ़ाया।

'उ हूँ।' उसने चेहरा हटा लिया तो मंगल पंडा ने कहा, 'चंदन तिलक के बगैर अस्नान अधूरा होता है बेटा।'

संभव ने चुपचाप तिलक लगवा लिया। वह वापस सीढ़ियाँ चढ़ ही रहा था कि पौड़ी पर बने एक छोटे से मंदिर के पुजारी ने आवाज़ लगाई, 'अरे दर्शन तो करते जाओ'।

संभव ठिठक गया।

उसकी इन चीज़ों में नियमित आस्था तो नहीं थी पर नानी ने कहा था, 'मंदिर में बीस आने चढ़ाकर आना।'

संभव ने कुरते की जेब में हाथ डाला। एक रुपए का नोट तो मिल गया चवन्नी के लिए उसे कुछ प्रयत्न करना पड़ा। चवन्नी जेब में नहीं थी। संभव ने थैला खखोरा। पुजारी ने उसकी परेशानी ताड़ ली।

"इधर आओ, हम दें रेजगारी।"

संभव ने झेंपते हुए एक का नोट जेब में रखकर दो का नोट निकाला। पुजारी जी ने चरणामृत दिया और लाल रंग का कलावा बाँधने के लिए हाथ बढ़ाया।

संभव का ध्यान कलावे की तरफ़ नहीं था। वह गंगा जी की छटा निहार रहा था। तभी एक और दुबली नाज़ुक सी कलाई पुजारी की तरफ़ बढ़ आई। पुजारी ने उस पर कलावा बाँध दिया। उस हाथ ने थाली में सवा पाँच रुपए रखे।

लड़की अब बिलकुल बराबर में खड़ी, आँख मूँदकर अर्चन कर रही थी। संभव ने यकायक मुड़कर उसकी ओर गौर किया। उसके कपड़े एकदम भीगे हुए थे, यहाँ तक कि उसके गुलाबी आँचल से संभव के कुर्ते का एक कोना भी गीला हो रहा था। लड़की के लंबे गीले बाल पीठ पर काले चमकीले शॉल की तरह लग रहे थे। दीपकों के नीम उजाले में, आकाश और जल की साँवली संधि-बेला में, लड़की बेहद सौम्य, लगभग काँस्य प्रतिमा लग रही थी।

लड़की ने कहा, "पंडित जी, आज तो आरती हो चुकी। क्या करें हमें देर हो गई।"

पुजारी ने उत्साह से कहा, "इससे क्या, हम हिंया कराय दें। का कराना है संकल्प, कल्याण-मंत्र, आरती जो कहो?"

"नहीं हम कल आरती की बेला आएँगे।" लड़की ने कहा।

संभव इंतज़ार में खड़ा था कि पुजारी उसे पचहत्तर पैसे लौटाए। लेकिन पुजारी भूल चुका था। जाने कैसे पुजारी ने लड़की के 'हम' को युगल अर्थ में लिया कि उसके मुँह से अनायास आशीष निकली, "सुखी रहो, फूलोफलो, जब भी आओ साथ ही आना, गंगा मैया मनोरथ पूरे करें।"

लड़की और लड़का दोनों अकबका गए।

लड़की छिटककर दूर खड़ी हो गई।

लड़के को तुरंत वहाँ से चल पड़ने की जल्दी हो गई।

शायद उनकी चप्पलें एक ही रखवाले के यहाँ रखी हुई थीं। टोकन देकर चप्पलें लेते समय दोनों की निगाहें एक बार फिर टकरा गईं। आँखों का चकाचौंध अभी मिटा नहीं था।

संभव आगे बढ़कर कहना चाहता था, "देखिए इसमें मेरी कोई गलती नहीं थी। पुजारी ने गलत अर्थ ले लिया।" लड़की कहना चाहती थी, "आपको इतना पास नहीं खड़ा होना चाहिए था।"

लड़की ने अपना होंठ दाँतों में दबाकर छोड़ दिया। भूल तो उसी की थी। बाद में तो वही आई थी। अंधेरे से घबराकर कहाँ, कितनी पास खड़ी हुई, उसे कुछ खबर नहीं थी। लेकिन बातचीत के लायक दोनों की मन:स्थिति नहीं थी। पहचान भी नहीं। दोनों ने नज़रें बचाते हुए चप्पलें पहनीं।

लड़की घबराहट में ठीक से चप्पल पहन नहीं पाई। थोड़ी सी अँगूठे में अटकाकर ही आगे बढ़ गई।

संभव ने आगे लपककर देखना चाहा कि लड़की किस तरफ़ गई। वह घाट की भीड़ को काटता हुआ सब्जीमंडी पहुँच गया। हर की पौड़ी और सब्जीमंडी के बीच अनेक घुमावदार गलियाँ थीं। लड़का देख नहीं पाया लड़की कहाँ ओझल हो गई।

नानी का घर करीब आ गया था लेकिन लड़का घर नहीं गया। वह वापस अनदेखी गलियों में चक्कर लगाता रहा। उसने चूड़ी की समस्त दुकानों पर नज़र दौड़ाई। हर दुकान पर भीड़ थी पर एक भीगी, गुलाबी आकृति नहीं थी। आखिर भटकते-भटकते संभव हार गया। पस्त कदमों से वह घर की ओर मुड़ा।

नानी ने द्वार खोलते हुए कहा, "कहाँ रह गए थे लल्ला। मैं तो जी में बड़ा काँप रही थी। तुझे तो तैरना भी न आवे। कहीं पैर फिसल जाता तो मैं तेरी माँ को कौन मुँह दिखाती।"

संभव कुछ नहीं बोला। थैला तख्त पर पटक, पैर धोने नल के पास चला गया।

नानी बोली, "ब्यालू कर ले।"

संभव फिर भी नहीं बोला।

नानी की आदत थी एक बात को कई-कई बार कहती। संभव तख्त पर लेट गया।

नानी ने कहा, "थक गया ना। अरे तुझे मेले-ठेले में चलने की आदत थोड़ेई है। कल बैसाखी है, इसलिए भीड़ बहुत बढ़ गई है। अभी तो कल देखना, तिल धरने की जगह नहीं मिलेगी पौड़ी पर। चल उठ खायबे को खा ले।"

"मुझे भूख नहीं है," संभव ने कहा और करवट बदल ली।

"अरे क्या हो गया। अस्नान के बाद भी भूख नाँय चमकी। तभी न इतनी सींक सलाई देही है। मैंने सबिता से पहले ही कही थी, इसे अकेले ना भेज। यहाँ जी ना लगे इसका।" नानी पास खड़े खटोले पर अधलेटी हो गई। उम्र के साथ-साथ नानी की काया इतनी संक्षिप्त हो गई थी कि वे फैल पसर कर सोती तो भी उनके लिए खटोला पर्याप्त था। पर उन्हें सिकुड़कर, गठरी बनकर सोने की आदत थी।

गंगा को छूकर आती हवा से आँगन काफ़ी शीतल था। ऊपर से नानी ने रोज़ की तरह शाम को चौक धो डाला था।

नींद और स्वप्न के बीच संभव की आँखों में घाट की पूरी बात उतर आई। लड़की का आँख मूँदकर अर्चना करना, माथे पर भीगे बालों की लट, कुरते को छूता उसका गुलाबी आँचल और पुजारी से कहता उसका सौम्य स्वर 'हम कल आएँगे।'

संभव की आँख खुल गई। यह तो वह भूल ही गया था। लड़की ने कल वहाँ आने का वचन दिया था। संभव आशा और उत्साह से उठ बैठा।

नानी को झकझोरते हुए बोला, "नानी, नानी चलो खा लें मुझे भूख लगी है।" नानी की नींद झूले के समान थी, कभी गहरी, कभी उथली। उथले झोटे में उन्हें धेवते की सुध आई। वे रसोई से थाली उठा लाईं।

संभव ने बहुत मगन होकर खाना शुरू किया, "वाह नानी! क्या आलू टमाटर बनाया है, माँ तो ऐसा बिलकुल नहीं बना सकतीं। ककड़ी का रायता मुझे बहुत पसंद है।"

खाते-खाते संभव को याद आया आशीर्वचन की दुर्घटना तो बाद में घटी थी। वह कौर हाथ में लिए बैठा रह गया। उसकी आँखों के बीच आगे कुछ घंटे पहले का सारा दृश्य घूम गया। पुजारी का वह मंत्रोच्चार जैसा पवित्र उद्गार 'सुखी रहो, फूलो-फलो, सारे मनोरथ पूरे हों। जब भी आओ साथ ही आना।' लड़की का चिहुँकना, छिटककर दूर खड़े होना, घबराहट में चप्पल भी ठीक से न पहन पाना और आगे बढ़ जाना।

संभव ने विचलित स्वर में कहा, "मुझे भूख नाँय। मैं तो यों ही उठ बैठा था।"

सारी रात संभव की आँखों में शाम मँडराती रही। उसकी ज़्यादा उम्र नहीं थी। इसी साल एम.ए. पूरा किया था। अब वह सिविल सर्विसेज़ प्रतियोगिताओं में बैठने वाला था। माता-पिता का खयाल था वह हरिद्वार जाकर गंगा जी के दर्शन कर ले तो बेखटके सिविल सेवा में चुन लिया जाएगा। लड़का इन टोटकों को नहीं मानता था पर घूमना और नानी से मिलना उसे पसंद था।

अभी तक उसके जीवन में कोई लड़की किसी अहम भूमिका में नहीं आई थी। लड़कियाँ या तो क्लास में बाँयी तरफ़ की बेंचों पर बैठनेवाली एक कतार थी या फिर ताई चाची की लड़कियाँ जिनके साथ खेलते खाते वह बड़ा हुआ था। इस तरह बिलकुल अकेली, अनजान जगह पर, एक अनाम लड़की का सद्य-स्नात दशा में सामने आना, पुजारी का गलत समझना, आशीर्वाद देना, लड़की का घबराना और चल देना सब मिलाकर एक नयी निराली अनुभूति थी जिसमें उसे कुछ सुख और ज़्यादा बेचैनी लग रही थी। उसने मन ही मन तय किया कि कल शाम पाँच बजे से ही वह घाट पर जाकर बैठ जाएगा। पौड़ी पर इस तरह बैठेगा कि कल वाले पुजारी के देवालय पर सीधी आँख पड़े।

उसने तो लड़की का नाम भी नहीं पूछा। वैसे वह हरिद्वार की नहीं लगती थी। कैसी लगती थी, संभव ने याद करने की कोशिश की। उसे सिर्फ़ उसकी दुबली पतली काया, गुलाबी साड़ी, और भीगी-भीगी श्याम सलोनी आँखें दिखीं। उसे अफ़सोस था वह उसे ठीक से देख भी नहीं पाया पर यह तय था कि वह उसे हज़ारों की भीड़ में भी पहचान लेगा।

अभी चिड़ियों ने आँगन में लगे अमरूद के पेड़ पर चहचहाना शुरू ही किया था कि नानी ने आवाज़ दी, "लल्ला चलेगा गंगाजी, आज बैसाखी है।"

संभव को लगा वह रातभर सोया नहीं है। नानी की मौजूदगी में जैसे उसे संकोच हो रहा था। उसने कहा, "तुम मेरे भी नाम की डुबकी लगा लेना नानी, मैं तो अभी सोऊँगा।"

नानी द्वार उढ़काकर चली गईं, तो लड़के ने अपनी कल्पना को निर्द्वंद्व छोड़ दिया। आज जब वह सलोनी उसे दिखेगी तो वह उसके पास जाकर कहेगा, "पुजारी जी की नादानी का मुझे बेहद अफ़सोस है। यकीन मानिए, पंडित जी मेरे लिए भी उतने ही अनजान हैं। जितने आपके लिए।"

लड़की कहेगी, "कोई बात नहीं।"

वह पूछेगा, "आप दिल्ली से आई हैं?"

लड़की कहेगी, "नहीं हम तो... के हैं।"

बस उसके हाथ पते की बात लग जाएगी। अगर उसने रुख दिखाया तो वह कहेगा, "मेरा नाम संभव है और आपका?"

वह क्या कहेगी? उसका नाम क्या होगा। वह बी.ए. में पढ़ रही होगी या एम.ए. में? इन सवालों के जवाब वह अभी ढूँढ़ भी नहीं पाया था कि नानी वापस आ गईं।

"ले तू अभी तक सुपने ले रहा है, वहाँ लाखन लाख लोग नहान कर लिए। अरे कभी तो बड़ों का कहा कर लो।" लड़के की तंद्रा नष्ट हो गई। नानी उवाच के बीच सपने नौ दो ग्यारह हो गए।

लड़के ने उठते-उठते तय किया कि इस वक्त वह घाट तक चला तो जाएगा, पर नहाएगा नहीं। हाथ-मुँह धोकर प्रार्थना कर लेगा। कुछ देर पौड़ी पर बैठ गंगा की जलराशि निहारेगा। लौटते हुए मथुरा जी की प्राचीन दुकान से गरम जलेबी खरीदेगा और वापस आ जाएगा। उसने कुरते की जेब में बीस का नोट डाला और चल दिया।

वास्तव में पौड़ी पर आज अद्भुत भीड़ थी। गंगा के घाट से भी चौड़ा मानव-रेला दिखाई दे रहा था। भोर की आरती हो चुकी थी। लेकिन भजन ज़ोर-शोर से चले जा रहे थे। नारियल, फूल और प्रसाद की घनघोर बिक्री थी।

भीड़ लड़के ने दिल्ली में भी देखी थी, बल्कि रोज़ देखता था। दफ़्तर जाती भीड़, खरीद फ़रोख्त करती भीड़, तमाशा देखती भीड़, सड़क क्रॉस करती भीड़। लेकिन इस भीड़ का अंदाज़ निराला था। इस भीड़ में एकसूत्रता थी। न यहाँ जाति का महत्त्व था, न भाषा का, महत्त्व उद्देश्य का था और वह सबका समान था, जीवन के प्रति कल्याण की कामना। इस भीड़ में दौड़ नहीं थी, अतिक्रमण नहीं था और भी अनोखी बात यह थी कि कोई भी स्नानार्थी किसी सैलानी आनंद में डुबकी नहीं लगा रहा था। बल्कि स्नान से ज़्यादा समय ध्यान ले रहा था। दूर जलधारा के बीच एक आदमी सूर्य की ओर उन्मुख हाथ जोड़े खड़ा था। उसके चेहरे पर इतना विभोर, विनीत भाव था मानो उसने अपना सारा अहम त्याग दिया है, उसके अंदर 'स्व' से जनित कोई कुंठा शेष नहीं है, वह शुद्ध रूप से चेतनस्वरूप, आत्माराम और निर्मलानंद है।

एक छोटे से लड़के ने लगभग हँसते हुए उसका ध्यान भंग किया। "भैया आप नहीं नहाएँगे?"

संभव ने गौर किया। जाने कब पौड़ी पर उसके नज़दीक यह बच्चा आ बैठा था। उसका भाल चंदन चर्चित था। चेहरे पर चमकीली ताज़गी थी।

"अकेले हो?"

"नहीं बुआ साथ हैं।"

"कहाँ से आए हो?"

"रोहतक"

"अब वापस जाओगे?"

"नहीं" बच्चे ने चमकीली आँखों से बताया, "अभी तो मंसा देवी जाना है, वह उधर।" बच्चा सामने पहाड़ी पर बना एक मंदिर इंगित से दिखाने लगा।

यह स्थल संभव को पहले दिन से ही अपनी ओर खींच रहा था। लेकिन नानी ने उसे बरज दिया था, "ना लल्ला मंसा देवी जाना है तो क्या वह झूलागाड़ी में तो बैठियो न। रस्सी से चलती है, क्या पता कब टूट जाए। एक बार टूटी थी, हजारन मरे गिरे थे। जाना है तो चढ़कर जाना, उसका महातम अलग है।"

संभव बहुत शारीरिक मेहनत में यकीन नहीं करता था। बरसों से कुरसी पर बैठ पढ़ते-पढ़ते उसे सक्रियता के नाम पर हमेशा किसी दिमागी हरकत का ही ध्यान

आता था। उसे यहाँ सुबह-सुबह नानी का झाड़ू लगाना, चक्की चलाना, पानी भरना, रात के माँजे बरतन फिर से धो-धोकर लगाना, सब कष्ट दे रहा था। वह एतराज़ नहीं कर रहा था तो सिर्फ़ इसलिए कि महज़ चार दिन रुककर वह नानी की दिनचर्या में हस्तक्षेप करने का अधिकारी नहीं बन सकता।

संभव ने बच्चे से कहा, "अगर गिर गए तो?"

बच्चा हँसा, "इतने बड़े होकर डरते हो भैया? गिरेंगे कैसे, इतने लोग जो चढ़ रहे हैं।"

शहर के इतिहास के साथ-साथ संभव उसका भूगोल भी आत्मसात करना चाहता था। इसलिए थोड़ी देर बाद वह अटकता भटकता, उस जगह पहुँच गया जहाँ से रोपवे शुरू होती थी।

रोपवे के नाम में कोई धर्माडंबर नहीं था। 'उषा ब्रेको सर्विस' की खिड़की के आगे लंबा क्यू था। वहीं मंसा देवी पर चढ़ाने वाली चुनरी और प्रसाद की थैलियाँ बिक रही थीं। पाँच, सात और ग्यारह रुपए की। कई बच्चे बिंदी-पाउडर और उसके साँचे बेच रहे थे, तीन-तीन रुपए। उन्होंने अपनी हथेली पर कलात्मक बिंदियाँ बना रखी थीं। नमूने की खातिर। उससे पहले संभव ने कभी बिंदी जैसे शृंगार प्रसाधन पर ध्यान नहीं दिया था। अब यकायक उसे ये बिंदियाँ बहुत आकर्षक लगीं। मन ही मन उसने एक बिंदी उस अज्ञातयौवना के माथे पर सजा दी। माँग में तारे भर देने जैसे कई गाने उसे आधे अधूरे याद आकर रह गए। उसका नंबर बहुत जल्द आ गया। अब वह दूसरी कतार में था जहाँ से केबिल कार में बैठना था। सभी काम बड़ी तत्परता से हो रहे थे।

जल्द ही वह उस विशाल परिसर में पहुँच गया जहाँ लाल, पीली, नीली, गुलाबी केबिल कार बारी-बारी से आकर रुकतीं, चार यात्री बैठातीं और रवाना हो जातीं। केबिल कार का द्वार खोलने और बंद करने की चाभी ऑपरेटर के नियंत्रण में थी। संभव एक गुलाबी केबिल कार में बैठ गया। कल से उसे गुलाबी के सिवा और कोई रंग सुहा ही नहीं रहा था। उसके सामने की सीट पर एक नवविवाहित दंपति चढ़ावे की बड़ी थैली और एक वृद्ध चढ़ावे की छोटी थैली लिए बैठे थे।

संभव को अफ़सोस हुआ कि वह चढ़ावा खरीदकर नहीं लाया। इस वक्त जहाँ से केबिल कार गुज़र रही थी, नीचे कतारबद्ध फूल खिले हुए थे। लगता था रंग-बिरंगी वादियों से कोई हिंडोला उड़ा जा रहा है।

एक बार चारों ओर के विहंगम दृश्य में मन रम गया तो न मोटे-मोटे फ़ौलाद के खंभें नज़र आए और न भारी केबिल वाली रोपवे। पूरा हरिद्वार सामने खुला था। जगह-जगह मंदिरों के बुर्ज, गंगा मैया की धवल धार और सड़कों के खूबसूरत घुमाव। नीचे सड़क के रास्ते चढ़ते, हाँफते लोग। लिमका की दुकानें और नाम अनाम पेड़।

बहुत जल्द उनकी केबिल कार मंसा देवी के द्वार पर पहुँच गई। यहाँ फिर चढ़ावा बेचने वाले बच्चे नज़र आए।

संभव ने एक थैली खरीद ली और सीढ़ियाँ चढ़कर प्रांगण में पहुँच गया।

नाम मंसा देवी का था पर वर्चस्व सभी देवी-देवताओं का मिला जुला था।

एकदम अंदर के प्रकोष्ठ में चामुंडा रूप धारिणी मंसादेवी स्थापित थीं। व्यापार यहाँ भी था।

मनोकामना के हेतुक लाल-पीले धागे सवा रुपए में बिक रहे थे। लोग पहले धागा बाँधते, फिर देवी के आगे शीश नवाते।

संभव ने भी पूरी श्रद्धा के साथ मनोकामना की, गाँठ लगाई, सिर झुकाया, नैवेद्य चढ़ाया और वहाँ से बाहर आ गया।

आँगन में रुद्राक्ष मालाओं की अनेक गुमटियाँ थीं, जहाँ दस रुपए से लेकर तीन हज़ार तक की मालाओं पर लिखा था–'असली रुद्राक्ष, नकली साबित करने वाले को पाँच सौ रुपए इनाम।'

एक तरफ़ हलवाई गरम जलेबी, पूरी, कचौड़ी छान रहे थे। मेले का माहौल था।

संभव वापस केबिल कार की कतार में लग गया।

वापसी का रास्ता ढलवाँ था। कार और भी जल्द नीचे पहुँच रही थी।

इस बार संभव के साथ तीन समवयस्क लड़के बैठे हुए थे वह केबिल कार की ढलवाँ दौड़ देख रहा था कि यकायक दो आश्चर्य एक साथ घटित हुए।

वह बच्चा जो पौड़ी पर उसके करीब आकर बैठ गया था, दूर पीली केबिल कार में नज़र आया। बच्चे की लाल कमीज़ उसे अच्छी तरह याद थी। हालाँकि इतनी दूर से उसका चेहरा स्पष्ट नज़र नहीं आ रहा था।

और बच्चे से सटी हुई जो दुबली, पतली, श्याम सलोनी आकृति बैठी थी, वह थी वही लड़की जो कल शाम के झुटपुटे में हर की पौड़ी पर उससे टकराई थी।

संभव बेहद बेचैन हो गया। वह दाएँ-बाएँ झुक-झुककर चीह्नने की कोशिश करने लगा। उसका मन हुआ पंछी की तरह उड़कर पीली केबिल कार में पहुँच जाए।

बहुत जल्द केबिल कार वापस नीचे पहुँच गई।

संभव ने आगे-आगे जाते बच्चे को लपककर कंधे से थाम लिया और बोला, "कहो दोस्त?"

बच्चे ने अचकचाकर उसकी ओर देखा–"अरे भैया"। रुककर बोला, "हमने सोचा जब हमारा दोस्त नहीं डरता तो हो जाए एक ट्रिप।"

तभी आगे से एक महीन सी आवाज़ ने कहा, "मन्नू घर नहीं चलना है।"

बालक मन्नू ने कहा, "अभी आया बुआ।"

संभव ने अस्फुट स्वर में पूछा, "ये तुम्हारी बुआ हैं।"

"और क्या" मन्नू ने साश्चर्य जवाब दिया।

"हमें नहीं मिलाओगे, हम तो तुम्हारे दोस्त हैं।"

मन्नू वाकई उसका हाथ खींचता हुआ चल दिया, "बुआ, बुआ, इनसे मिलो, ये हैं हमारे नए दोस्त..."

उसने प्रश्नवाचक नज़रों से संभव को देखा, "अपना नाम खुद बताइए।" वह अपना बताता, इससे पहले उसी महीन मीठी आवाज़ ने कहा, "ऐसे कैसे दोस्त हैं तुम्हारे, तुम्हें उनका नाम भी नहीं पता?"

अब संभव ने गौर किया, बिलकुल वही कंठ, वही उलाहना, वही अंदाज़। पुलक से उसका रोम-रोम हिल उठा। हे ईश्वर! उसने कब सोचा था मनोकामना का मौन उद्गार इतनी शीघ्र शुभ परिणाम दिखाएगा।

लड़की ने आज गुलाबी परिधान नहीं पहना था पर सफेद साड़ी में लाज से गुलाबी होते हुए उसने मंसा देवी पर एक और चुनरी चढ़ाने का संकल्प लेते हुए सोचा, "मनोकामना की गाँठ भी अद्भुत, अनूठी है, इधर बाँधो उधर लग जाती है..."

"पारो बुआ, पारो बुआ, इनका नाम है..." मन्नू ने बुआ का आँचल खींचते हुए कहा।

"संभव देवदास" संभव ने हँसते हुए वाक्य पूरा किया। उसे भी मनोकामना का पीला-लाल धागा और उसमें पड़ी गिठान का मधुर स्मरण हो आया।

प्रश्न-अभ्यास

1. पाठ के आधार पर हर की पौड़ी पर होने वाली गंगा जी की आरती का भावपूर्ण वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
2. 'गंगापुत्र के लिए गंगा मैया ही जीविका और जीवन है'–इस कथन के आधार पर गंगा पुत्रों के जीवन-परिवेश की चर्चा कीजिए।
3. पुजारी ने लड़की के 'हम' को युगल अर्थ में लेकर क्या आशीर्वाद दिया और पुजारी द्वारा आशीर्वाद देने के बाद लड़के और लड़की के व्यवहार में अटपटापन क्यों आया?
4. उस छोटी सी मुलाकात ने संभव के मन में क्या हलचल उत्पन्न कर दी, इसका सूक्ष्म विवेचन कीजिए।
5. मंसा देवी जाने के लिए केबिलकार में बैठे हुए संभव के मन में जो कल्पनाएँ उठ रही थीं, उनका वर्णन कीजिए।
6. "पारो बुआ, पारो बुआ इनका नाम है... उसे भी मनोकामना का पीला-लाल धागा और उसमें पड़ी गिठान का मधुर स्मरण हो आया।" कथन के आधार पर कहानी के संकेतपूर्ण आशय पर टिप्पणी लिखिए।
7. 'मनोकामना की गाँठ भी अद्भुत, अनूठी है, इधर बाँधो उधर लग जाती है।' कथन के आधार पर पारो की मनोदशा का वर्णन कीजिए।
8. निम्नलिखित वाक्यों का आशय स्पष्ट कीजिए–

   (क) 'तुझे तो तैरना भी न आवे। कहीं पैर फिसल जाता तो मैं तेरी माँ को कौन मुँह दिखाती।'

   (ख) 'उसके चेहरे पर इतना विभोर विनीत भाव था मानो उसने अपना सारा अहम त्याग दिया

है, उसके अंदर स्व से जनित कोई कुंठा शेष नहीं है, वह शुद्ध रूप से चेतनस्वरूप, आत्माराम और निर्मलानंद है।'

(ग) 'एकदम अंदर के प्रकोष्ठ में चामुंडा रूप धारिणी मंसादेवी स्थापित थी। व्यापार यहाँ भी था।'

9. 'दूसरा देवदास' कहानी के शीर्षक की सार्थकता स्पष्ट कीजिए।
10. 'हे ईश्वर! उसने कब सोचा था कि मनोकामना का मौन उद्‌गार इतनी शीघ्र शुभ परिणाम दिखाएगा–आशय स्पष्ट कीजिए।'

भाषा-शिल्प

1. इस पाठ का शिल्प आख्याता (नैरेटर-लेखक) की ओर से लिखते हुए बना है—पाठ से कुछ उदाहरण देकर सिद्ध कीजिए।
2. पाठ में आए पूजा-अर्चना के शब्दों तथा इनसे संबंधित वाक्यों को छाँटकर लिखिए।

योग्यता-विस्तार

1. चंद्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' कहानी पढ़िए और उस पर बनी फ़िल्म देखिए।
2. हरिद्वार और उसके आसपास के स्थानों की जानकारी प्राप्त कीजिए।
3. गंगा नदी पर एक निबंध लिखिए।
4. आपके नगर / गाँव में नदी-तालाब-मंदिर के आसपास जो कर्मकांड होते हैं उनका रेखाचित्र के रूप में लेखन कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

गोधूलि बेला – संध्या का समय
हुज्जत – बहस
ब्यालू – शाम का भोजन
नीलांजलि – विशेष प्रकार का दीपक जिसे प्रज्ज्वलित कर आरती के समय देवमूर्ति के सामने घुमाया जाता है।
मनोरथ – मन की इच्छा, अरमान
बेखटके – बिना किसी रुकावट के
कलावा – कलाई में बाँधी गई लाल डोरी, मौली
प्रकोष्ठ – कक्ष, कमरा
झुटपुटा – कुछ-कुछ अँधेरा,
अस्फुट – अस्पष्ट, कुछ-कुछ उजाला
आत्मसात – अपने में समा लेना
जी खोलकर देना – उदारतापूर्वक खर्च करना
नज़रें बचाना – एक दूसरे से कतराना
नौ दो ग्यारह होना – भाग जाना, गायब होना